श्री

विदेहक्षेत्रीयविंशतितीर्थंकर-संस्कृतपूजा।

ग्रन्थकर्ता—रामप्रसाद जैन, पद्मावतीपुरवाल।

श्री

विदेहक्षेत्रीयविंशतितीर्थंकराणाम्संस्कृतपूजा ।

पूजा पूज्यस्य सत्कारो द्रव्य[illegible] मुनिर्मलैः ।
विधिना सा सदा भाव्या [illegible]धर्मीयपदानुगैः ॥

द्वितीय चैत्र, वीर सं० २४५२
विक्रम सम्वत् १९८३
अप्रैल सन् १९२६ ई०

संशोध्य प्रकाशकश्च-
रामप्रसादजैनः
पद्मावतीपुरवालः

पुस्तकमिलनेका पता—**पं० रामप्रसाद लक्ष्मीचन्द्र जैन,** पद्मावतीपुरवाल—
ठि. श्रीचन्द्रप्रभ दिगम्बर जैनमंदिर, भोलेश्वर, गो. नं. २ बम्बई ।

प्रस्तावना ।

ग्रंथके साथ प्रस्तावनाका होना ग्रंथके एक (मुख्य) उद्देश्य तथा उसके विषयको भव्य भावरूपसे सूचित करना है। इसी कारण प्रायः अनेक ग्रन्थकारोंने ग्रंथकी आदि तथा अंतमें प्रस्तावना की रचना की थी, तथा अब भी वही क्रम जारी है, बल्कि आज कल तो कोई भी ग्रंथ लिखा जाय तथा प्रकाशित किया जाय तो उसकी प्रस्तावना अवश्य ही रहती है। उसके बिना ग्रंथकी विशेष रूपसे उपादेयता ही नहीं समझी जाती। इसलिये इस छोटेसे ग्रंथके साथ भी कमसे कम एक छोटी प्रस्तावनाका होना आवश्यक है। अतः इस ग्रंथके साथ भी जो भूमिका लगाई जाती है वह भी इसकी उपादेयताका हेतु समझकर ही लगाई गई है।

यह ग्रंथ संस्कृत भाषामें बनाया गया है, इसलिये इसकी भूमिका भी संस्कृत भाषामें ही होनी चाहिये थी, परन्तु कितनेक मित्र महोदयोंकी यह इच्छा थी कि भूमिका हिन्दी भाषामें ही हो तो अच्छा है, क्योंकि ऐसा होनेसे सर्व साधारण भी इसका हेतु समझ सकेंगे, तथा लाभ उठा सकेंगे, बस यही उद्देश्य लक्ष्यमें रखकर इसकी रचना हिन्दीमें की है। जब कि इस दि. जैन समाजमें इस समय अनेक भाषाओंके अनेक पूजा पाठ मौजूद हैं फिर इस समय

इसके बनने तथा प्रकाशित होनेकी क्या आवश्यकता थी? ऐसी शंका स्वयमेवही किसी २ की बुद्धिमें स्थान पा सकती है। परन्तु इसका समाधान भी थोड़े शब्दोंमें यह हो सकता है कि लोक भिन्न रुचि है, तथापि यह **विदेहस्थविंशतितीर्थंकरपूजाका पाठ** अन्य पाठोंके समान असलियतमें संस्कृतमें नहीं है, फिर भी जो कुछ है वह प्राय: अशुद्ध होनेसे नहीं सरीखा ही है, तथापि उसके साथ कोई जयमाल भी संस्कृतमें आज तक देखनेमें नहीं आई, ऐसी अवस्थामें उस पाठको देखकर पहले तो मेरी यही रुचि हुई कि, इस पाठको ही यदि सुधार दिया जाय तो वहुत अच्छा होगा, क्यों कि जो संस्कृत पाठसे पूजा करनेकी रुचि रखते हैं उनका इस पाठसे जो अभिप्रेत है वह सिद्ध नहीं हो सकता इसी कारण प्रथम उस पाठको शुद्ध करनेका प्रयत्न किया गया, परंतु वह प्रयत्न ग्रंथके किसी विशेष अवस्थामें ज्यादा अशुद्ध होनेसे उसके शुद्ध करनेका प्रयास छोड़ नवीन ग्रंथ वनानेकी इच्छा जागृत हुई और उसी इच्छाके अनुसार यह ग्रंथ बनाया, जिसकी कि एक नकल **श्रीचंद्रप्रभदिगम्बरजैनमन्दिर** भोलेश्वरके एक गुटकेमें कर दी है परंतु उसमें अष्टकके छंद दूसरे हैं क्योंकि पहले वे ही छंद बनाये थे, वाद ये बनाये। इन अष्टकोंके लिखनेका सिर्फ उद्देश्य यही था कि उन अष्टकोंमें दूसरे पूजन करनेवालोंको पूजन करने विषयके सम्मतिसूचक

वाक्य हैं । जिनसे कि—आज्ञार्थक वाक्योंका भी लोगोंको भ्रम होसकता था, परंतु हमारा अभिप्राय यह नही था, कि हम आज्ञा दें, किन्तु लोट् लकारकी क्रिया होनेसे वैसा भ्रम भलेंही हो, तथा वे जो अष्टकके छंद हैं उनकी निर्माण शैली प्राचीन पूजन पाठके कुछ मिलते जुलते शद्बोंसे आभासित होती है। इसलिये कितनेक महाशय जिनको कि प्राचीन पाठ याद है वे दोंनोंका विना मिलान किये तथा श्लोकके अर्थपर ध्यान न देकर कितनेक शब्दोंकी सदृशतामें यह भी कह सकते हैं कि यह प्राचीनाष्टकका ही सुधारा है, इसकी रचनामें कुछ विशेषता नहीं इत्यादि वातोंकी संभावना होनेसे यह नवीनाष्टक बनाया है । अष्टक दोंनोंही तारतम्य लिये विद्वानोंकी अपेक्षामें भावपूर्ण हैं फिर भी पहलेसे इसमें भावुकता विशेष है तथा इसमें पूर्व शंकाको भी स्थान नही है अतः ये नवीनाष्टक ही जयमालके साथ छपवाये हैं । इन अष्टकोंकी भी हो सकी तो एक प्रति उसी गुटकेमें करदी जायगी जिसमें कि इसी जयमालाके साथ पहिले अष्टक हैं ।

यह प्रस्तावना पूजा पुस्तककी है इसलिये यहां कुछ पूजाके विषयमें भी आवश्यकीय विषयोंपर स्पष्टीकरण करना जरूरी है अतः इसी विषयका कुछ दिग्दर्शन नीचे प्रमाण है ।

पूजाकी आवश्यकता।

पूजा परिणाम विशुद्धिका एक अंग है, क्योंकि यह—पूज्य सर्वगुणसम्पन्न वीतराग जिनेन्द्र परमात्माके अनन्त विशुद्ध गुणोंकी स्मरणात्मक जागृतिका एक सच्चा आदर्श है, और यह श्रावकों (गृहस्थों) के आत्मीक विशुद्धभाव समुन्नति करनेमें अधिश्रेणि (नसैनी) के प्रथम दंडके-समान आद्य कारण है। तथा यों कहिये कि जिसपर परमात्म तत्त्व अवलम्बित है उस अहिंसावाद तदा निष्कपायत्व वादरूप सुन्दर प्रासादकी यह एक प्रथम नींव है। इसीकारण इसका श्रावक अवस्थामें धारण करना अत्यन्त आवश्यक है।

पूज्यपाद आचार्य महोदयोंनें श्रावकोंके छह कर्तव्योंको आवश्यकीय कर्म समझकर ही नित्य कर्म, तथा नित्य धर्म, कह कर उपदेश दिया है उसमें श्रीपद्मनन्दिजी महाराजने तो (छहकर्मोंमें) पूजाको ही मुख्यकर छह कर्म पालनेका उपदेश दिया है।

यथा—**देवपूजा गुरूपास्तिः स्वाध्यायः संयमस्तपः**
दानं चेति गृहस्थानां षट्कर्माणि दिने दिने ॥

अर्थात—देवपूजा, गुरुकी उपासना, स्वाध्याय, संयम, तप और दान, ये गृहस्थोंके छह कर्त्तव्य नित्यकर्म हैं।

श्रीअमितगतिजी आचार्यने श्रावकोंके अन्य धर्मोंके समान पूजाको भी एक धर्म रूपसे प्रति पादन किया है

यथा—**दानं पूजा जिनैः शीलमुपवासश्चतुर्विधः ।**

श्रावकाणामतो धर्मः संसारारण्यपावकः ॥

अर्थात्—जिनेन्द्र हेतुक दान, पूजा और शील तथा चार प्रकारका उपवास ये श्रावकोंके संसाररूपी वनको जलानेके लिये अग्निके समान धर्म हैं ।

जिस गृहस्थके पूजनादि कार्य नहीं होते उनके लिये पद्मनंदि स्वामीजीके ये वाक्य हैं ।

यथा—**ये जिनेन्द्रं न पश्यन्ति पूजयन्ति स्तुवन्ति न ।**

निष्फलं जीवितं तेषां तेषां च धिग्गृहाश्रमम् ॥

अर्थात्—जो जिनेन्द्रके दर्शन, पूजा, स्तुति नहीं करते उनका जीवन निष्फल और गृहस्थाश्रम धिक्कारका पात्र है ।

सकलकीर्ति आचार्यके तो खास पूजनके विषयमें ये निम्न लिखित वाक्य हैं ।

पूजां विना न कुर्येत भोगसौख्यादिकं कदा ।

अर्थात्—पूजाके विना भोग सुखादिक कभी न करै ।

इसी प्रकार—धर्मसंग्रहश्रावकाचार, आदिपुराण, रयणसार, सागरधर्मामृत, वगैरः में पूजाको कहीं गृहस्थकर्म, तथा कहीं गृहस्थधर्म, सूचित कर दररोज पूजा करने की आज्ञा दी है। इसलिये इस सर्व कथनसे सिद्ध है कि—पूजा करना एक आवश्यक कर्म है।

पूजाकालक्षण।

पूजाका लक्षण विस्तारसे अपने ग्रन्थोंमें ग्रंथकारोंने अंग प्रत्यङ्गोंके साथ जो वर्णन किया है उसीका संक्षिप्त आशय इस निम्नलिखित श्लोकमें गर्भित है।

पूजा पूज्यस्य सत्कारो द्रव्यैः भावैः सुनिर्मलैः।
विधिना सा सदा भाव्या स्वीयस्वीयपदानुगैः॥

अर्थात्—प्रतिष्टाचार्य या पूजासम्बन्धि शास्त्रोंके द्वारा जानी गई विधिसे अपने २ पदके योग्य प्रासुक निर्मल जल चंदनादि अष्ट द्रव्योंसे तथा निर्मल भावोंसे द्रव्य पूजनकी अपेक्षा सचित्त (प्रत्यक्ष तीर्थंकरादि) अचित्त (तीर्थंकरादिका शरीर, तथा द्रव्यश्रुत) मिश्र (एक साथ सचित अचित) के भेदसे तीन प्रकारके पूज्योंका तथा अन्य पूजाओंके भेदसे—प्रतिमा, क्षेत्र, गुणादि (पूज्यों) का आदर करना है वह पूजा है।

अथवा **स्वीयस्वीयपदानुगः** इस पदका अर्थ पूजक भी होता है, अर्थात् अपने २ देव मनुष्यादि पदके अनुरूप नित्यादि पांच प्रकारकी और नाम, स्थापनादि ६ प्रकारकी तथा नित्य नैमित्तक २ प्रकारकी पूजा करनेवाले पूजकोंके द्वारा निर्मल द्रव्य भावसे पूज्यका आदर पूजा है। इस अर्थसे पूजाका भेदस्वरूप और उपरके अर्थसे अभेदस्वरूप जो अर्थ है वह भेदाभेद रूप नयकी अपेक्षासे है।

पूजाके भेद।

पूजाके—नित्य, आष्टाह्निक, ऐन्द्रध्वज, चैतुर्मुख, कल्पद्रुम, ये पांच भेद तथा प्रकारान्तरसे—नाम, स्थापना, द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव ये ६ छह भेद हैं तथा और भी नित्य नैमितिक २ दो भेद हैं इनका स्वरूप—आदिपुराण, चारित्रसार, सागार-धर्मामृत, वसुनंदि-श्रावकाचार, धर्मसंग्रह-श्रावकाचार, वगैरह ग्रंथोंमें विस्तारके साथ वर्णन किया है। अतः हम उनसे ज्यादा कुछ लिख भी नहीं सकते तथा उन्हींका उतारा तथा सार लिखकर कुछ लिखते भी परंतु भूमिकाके जादा बढ़ जानेसे केवल भेद मात्र ही लिखे हैं।

---

१ इसका दूसरा नाम—**सर्वतोभद्र** भी है।

पूजाका फल ।

जिनागममें पूजाके माहात्म्यका बहुत ही कुछ वर्णन किया है। वल्कि यहां तक वर्णन किया है कि यदि तिर्यंच भी शुद्ध द्रव्य तथा भावसे पूजन करै तो लौकिक स्वर्गादि सुख भोग कर क्रमसे निर्वाण प्राप्त करता है । इसके उदाहरण रत्नकरंडश्रावकाचार, सागारधर्मामृत, पुण्यास्रव, आराधनासार, कथाकोश वगैर ग्रंथोंमें कई जगह पाये जाते हैं।

धन्यवाद ।

श्रीयुत सेठ **पूनमचंद्रजी घासीलालजी वीसा हूमड़ प्रतापगढ़ निवासीके चिरंजीवि सुपुत्र गेंदमलजी दाडिमचंद्रजी मोतीलालजी जौहरी (जवेरी)** ने इस पुस्तकको अपने द्रव्यसे छपाकर प्रकाशित कराया है अतः आप धन्यवादके पात्र हैं ।

निवेदन ।

प्रमाद तथा अल्पज्ञताके कारण त्रुटियोंका रहना स्वाभाविक है अतः यहां भी यदि कुछ त्रुटिजन्य दोष हो तो अल्पज्ञ समझ कर पाठक मुझे क्षमा करैं ।

मि० द्वि० चैत्र सुदि
१० सं० १९८३
वीर सम्बत् २४५२
ता० २२-४-१९२६ ई०

निवेदक—
रामप्रसाद जैन-पद्मावती पुरवाल,
बम्बई ।

श्रीसीमंधरादिजिनेभ्यो नमः।

अथ संस्कृत-विदेहस्थविद्यमानविंशतितीर्थंकरपूजा।

मेरुपूर्वापराशासु[1] वैदेहा[2] ये जिनेश्वराः।
तेषां कुर्वे समाह्वानं मामकीनविशुद्धये ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं विदेहस्थविद्यमानविंशतितीर्थंकरा अत्रावतरतावतरतेति। समाह्वानकर्म॥ १॥

सार्द्धद्विमानुषे द्वीपे विद्यमानान् विदेहगान्।
स्थापयाम्यत्र विंशार्हान्[3] तीर्थेशान् भावशुद्धये ॥ २ ॥

१ मेरुपूर्वपश्चिमदिशासु। २ विदेहक्षेत्रोद्भवाः। ३ अकारान्तार्हशब्दस्यार्हान्-इति।

ॐ ह्रीं विदेहस्थविद्यमानविंशतितीर्थंकरा अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः । स्थापनकर्म ॥ २ ॥

पंचसंख्यविदेहेषु विद्यमानाजिनेश्वरान् ।
संदधाम्यत्र सान्निध्ये पूजायै दृष्टिशुद्धये ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं विदेहस्थविद्यमानविंशतितीर्थंकरा अत्र मम सन्निहिता भवत भवतेति ॥ सन्निधिकरणकर्म ॥ ३ ॥

अथाष्टकम् ।

(वसन्ततिलकानि)

गंगाप्रमुख्यशुचिनिर्मलनीरजातैः (पूरैः) ।
स्फाटिक्यकान्तिहिमंमिश्रितगंधजातैः ॥
सीमंधरादिजिनविंशतिपादपद्मान् ।
सन्तर्पयामि जनिमृत्युजरान्तहेतोः ॥ १ ॥

---

१ हिमःकर्पूरे, शीतलगुणेऽपि । २ जातः व्यक्तार्थे समूहार्थे च ।

ॐ ह्रीं पंचविदेहस्थविद्यमानविंशतितीर्थंकरश्रीसीमिंधरयुग्मंधरबाहुसुबाहु-संजातकस्वयंप्रभर्षभाननानन्तवीर्यसूरप्रभविशालकीर्तिवज्रधरचंद्राननचन्द्रबाहुभुजंगमे-श्वरनेमिप्रभवीरसेनमहाभद्रदेवयशोजितवीर्येभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति–स्वाहा॥ १ ॥

कर्पूरकुंकुमसुगन्धितपुष्पसारै–
रेकीकृतैर्मलयजद्रवगंधसारैः ॥
सीमंधरादिजिनविंशतिपादपद्मान् ।
संचर्चयामि भवतापविनाशहेतोः ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं विदेहस्थविद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यः संसारतापशान्तये चंदनं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

स्वच्छाक्षतैर्हृदयमोदकरैरखंडै ।
श्चान्द्रीप्रभैरतुषपद्मसुवासितेष्टैः ॥

---

१ संलेपयामीति पाठेऽपि साधुता ।

सीमंधरादिजिनविंशतितीर्थनाथान् ।
सम्पूजयामि विशदाक्षयधामहेतोः ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं श्रीविदेहस्थविद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्योऽक्षयपदप्राप्तयेऽक्षतं निर्वपामीति-स्वाहा ॥ ३ ॥

अम्भोजचम्पकलता[1]तृण[2]शून्यजाति[3]—
बन्धूक[4]केसर[5]सुगन्धितपुष्पजातैः ।
सीमंधरादिजिनविंशतिमारमारान्[6] ।
अभ्यर्चयामि मदनज्वरनाशहेतोः ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं विदेहस्थविद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यः कामाग्नितापशान्तये पुष्पं निर्वपामीति—स्वाहा ॥ ४ ॥

---

१ वासंतीलता, वासंती माधवीलता–इत्यमरः । २ तृणशून्यं मल्लिकायां यस्य हिन्दी भाषायां वेला–इति ख्यातिः, तृणशून्यं तु मल्लिका–इत्यमरः । ३ जातिर्मालत्यां यस्याः हिन्दी भाषायां चमेली–इति ख्यातिः, सुमना मालती जातिरित्यमरः । ४ बन्धूको रक्तकपुष्पे, यस्य दुपहरी इति हिन्दी भाषायां संज्ञा, रक्तकस्तुबन्धूको बन्धुजीवक इत्यमरः । ५ केसरः—बकुलो यस्य मौलसिरी संज्ञा हिन्दी भाषायां, अथ केसरे बकुल इत्यमरः । ६ काममृत्यून्, मारभीमान्–इति पाठोऽपि ।

स्वादिष्टमिष्टरसपायसमोदकाद्यैः ।
नैवेद्यकैः शुचितमैश्च सुधासमानैः ॥
सीमंधरादिजिनविंशतिमुख्यतीर्थान् ।
प्रार्चे क्षुधाविषमरोगविमुक्तिहेतोः ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं विदेहस्थविद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यः क्षुधादिरोगप्रशमनाय नैवेद्यं निर्वपामीति–स्वाहा ॥ ५ ॥

दीपैः प्रदीपितजगत्त्रयरश्मिजालैः ।
दूरीकृतान्धघनमोहमहत्प्रजालैः ॥
सीमंरधादिजिनविंशतिपूज्यपादा-
न्नर्चे महातिमिरमोहविनाशहेतोः ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं श्रीविदेहस्थविद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ६ ॥

सौगन्ध्यसारघनसारविशिष्टधूपैः ।
सौगन्ध्यसारवपुरेकविधानरूपैः ॥
सीमंधरादिजिनविंशतितीर्थवर्य्यान् ।
प्रार्चेऽष्टकर्मदहनाय सदा समर्च्यान् ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं श्रीविदेहस्थविद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्योऽष्टकर्मदहनाय सौगन्धिकसुन्दरशरीरप्राप्तये वा धूपं निर्वपामीति—स्वाहा ॥ ७ ॥

नारंगदाडिमरसालवदामपूगैः ।
श्रेष्ठैः फलैः सुफलमोक्षफलैकफुल्लैः[1] ॥
सीमंधरादिजिनविंशतितीर्थकर्तॄन् ।
सम्पूजये सुफलमोक्षफलाप्तिहेतोः[2] ॥ ८ ॥

१ सुन्दरफलस्वरूपमोक्षकार्यस्याद्वितीयविकसितकुसुमसदृशैः, यथा विकसितपुष्पानन्तरं फलाप्तिस्तथा फलार्चनेन भव्यभावस्य मोक्षाप्तिरिति, सुफलमत्र सुखदपाठोऽपि । २ सुफलमत्र निकलपाठेऽपि साधुत्वमिति ।

ॐ ह्रीं श्रीविदेहस्थविद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति—स्वाहा ॥ ८ ॥

सन्मिश्रितैर्जलसुगंधसदक्षताद्यै-
रघ्यैरनर्घपदमोक्षसुखादिभावैः ॥
सीमंधरादिजिनविंशतितीर्थभर्तृन् ।
प्रार्चाम्यनर्घपदमौक्तिकमुख्यहेतोः ॥ ९ ॥

ॐ ह्रीं श्रीविदेहस्थविद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्योऽनर्घपदप्राप्तयेऽर्घ्यं निर्वपामीति—स्वाहा ॥ ९ ॥

शार्दूलविक्रीडितं ।

दृष्टिज्ञानसुचारुदीप्तमणिना दीप्ताः सदा शाश्वताः ।
तीर्थेशा भवभावपाशरहिताः सीमंधराद्या जिनाः ॥
भव्यानां जयमालिकैककरणा विद्वेषिणः कर्मणः ।
ये तेभ्यः प्रददामि मोक्षगमने यानं महार्घ्यं शुभम् ॥१०॥

---

१ शकटं ।

ॐ ह्रीं श्रीविदेहस्थविद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो मोक्षगमनसाधनं महार्घ्यं निर्वमामीति—स्वाहा ॥ १० ॥

वसंततिलकम् ।

सीमंधरादिभवशान्तिकराजिनेन्द्राः ।
सर्वार्थसाधनगुणप्रणिधानरूपाः ।
तेभ्योऽर्पयामि भवकारणनाशवीजं ।
पुष्पांजलिं विमलमंगलकामरूपम् ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं विदेहस्थविद्यमानविंशतितीर्थंकरश्रीसीमंधरयुमंधरबाहुसुबाहुसंजातकस्वयंप्रभर्षभाननानन्तवीर्यसूरप्रभविशालकीर्तिवज्रधरचंद्राननचन्द्रबाहुभुजंगमेश्वरनेमिप्रभवीरसेनमहाभद्रदेवयशोजितवीर्येभ्य आशिषात्मिकां पुष्पांजलिं समर्पयामि, इति पुष्पांजलिसमर्पणम् ॥ ११ ॥

अथजयमालिकापरनामगुणानुवादस्तवनं, तत्र प्रतिज्ञाश्लोकः ।

स्तौमि विंशतिकान् देवान् पंचसंख्यविदेहगान् ।
सीमंधरादितीर्थेशान् नाम्ना व्यक्तगुणैः शुभे[1] ॥ १ ॥

भुजंगप्रयातछन्द्रःस्तुतिसमारम्भः ॥

सुसीमा धृता[2] येन सीमंधरेण भवारण्यभीमभ्रमीया[3] सुकृत्यैः ।
प्रवंद्यःसदा तीर्थकृद्देवदेवःप्रदेयात्स मेऽनन्तकल्याणवीजम्[4] ॥ १॥
सदा[5] युग्मधर्मीयमार्गप्रसिद्ध्या[6] धृता येन युग्मंधरीया[7] प्रसिद्धिः ।
प्रवंद्यः सदा तीर्थकृद्देवदेवः प्रदेयात्स मेऽनन्तकल्याणवीजम् ॥ २ ॥

---

१ शुभःनिमित्तमत्र निमिते सप्तमी । २ कृता-इत्यपिपाठे साधुता । ३ संसारवनभयंकरभ्रमण सम्बन्धिका । ४ अनन्तसौख्यसाधनम् । ५ सद्रूपिकया वा सर्वदा । ६ भावाभावात्मकमुनिश्रावकात्मक-द्रव्यभावात्मकादिद्वयधर्ममार्गप्रकर्षसिद्धया (प्रख्यात्या) ७ युग्मंधरनामिका (प्रसिद्धिः)।

दृढीया सुवृत्ता[1] सुदीर्घा यदीया भवाम्भोधिनिस्तारका बाहुनौका ।
प्रवंद्यः सदा तीर्थकृद्देवबाहुः[2] प्रदेयात्स मेऽनन्तकल्याणवीजम् ॥ ३ ॥
स्वमार्गे[3] महद्येन बाह्वोर्बलेन प्रवृत्तं सुवृत्तं[4] सुधर्मीयचक्रम् ।
प्रवंद्यःसदा तीर्थकृत् श्रीसुबाहुः[5] प्रदेयात्स मेऽनन्तकल्याणवीजम् ॥४॥
यया रश्मिवाण्या[6]ऽस्ति संजातवोधस्तया[7]ऽराजि[8] यः खेऽत्र[9] संजातमित्रः ।
प्रवंद्यः सदा देवसंजातकोऽर्हन् प्रदेयात्स मेऽनन्तकल्याणभावान् ॥ ५ ॥
स्वयं स्वप्रभा येन शाम्यप्रभावैर्भृता[10]तः स्वयंपूर्वकोऽस्ति प्रभो यः ।
प्रवंद्यः सदा तीर्थकृद्देवदेवः प्रदेयात्स मेऽनन्तकल्याणवीजम् ॥ ६ ॥

---

१ सुवर्तुलाकारा, सुचारित्रात्मिका वा । २ बाहुनामकदेवः । ३ मोक्षप्रदार्हन्त्यात्मके । ४ साधु-वर्तुलं, चारित्रं, वा । ५ विशिष्टशोभया सुबाहुनामकदेवः । ६ किरणसदृश्या किरणरूपया वा वाचा ७ कर्तृरूपया, । ८ अदीपि-इतिपाठेऽपिसाधुता । ९ आकाशे । १० धृता । ११ स्वयंप्रभनामदेवः

प्र[1]भक्त्यर्[2]षभादिप्रमुख्यैः स्वरैर्यः प्रगीतोऽप्सराभिर्जिनेशर्[3]षभास्यः ।
प्रवंद्यः प्रमुक्तेर्निमितो जनेभ्यः प्रदेयात्स मेऽनन्तकल्याणवीजम् ॥७॥
ययाऽनन्तशक्त्या श[4]तेन्द्रैः सुगीतः त[5]याऽराजि योऽनन्तवीर्यो जिनेन्द्रः।
प्रवंद्यः सदाऽ[6]नन्तवीर्यादिवीजं प्रदेयात्स मेऽनन्तकल्याणवीजं ॥ ८ ॥
सदा को[7]टिसूरप्रभाभिर्विशेषः प्रदीप्तः प्र[8]भासूरसूरप्रभो यः ।
प्रवंद्यः सदा तीर्थकृद्देवदेवः प्रदेयात्स मेऽनन्तकल्याणवीजम् ॥ ९ ॥
ग[9]णेशैः सु[10]भंग्या पदार्थोक्तिनीत्या विशाला सुकीर्तिः प्रगीताऽस्ति यस्य।
प्रवंद्यः विशा[11]लैककीर्तिर्जिनेन्द्रः प्रदेयात्स मेऽनन्तकल्याणवीजं॥१०॥

---

१ प्रभक्त्या । २ ऋषभगांधारादिस्वरैः । ३ ऋषभाननजिनः । ४ भवणालय चालीसेति गाथानुसारैरिन्द्रशतैः । ५ कर्तृभूतयाऽनन्तशक्त्या । ६ अनंतचतुष्टयकारणम् । ७ कोटिसंख्यकसूर्यकान्तिभिः । ८ प्रभाविशिष्टाः सूर्यास्तैः सदृशस्तदधिको वा सूरप्रभनामदेवः । ९ गणधरैः । १० सुशब्दरचनापदार्थकथनशैल्या वा सुन्दरसप्तभंगिरूपपदार्थकथनपद्धत्या । ११ विशालकीर्तिः देवः ।

धृतो ध्यानशुक्लास्त्रवज्रो जिनेन महत्कर्मशैलस्य नाशाय येन ।
स वंद्यो धरान्तश्च वज्रः शुभाख्यः सदा मे प्रदेयात्सुकल्याणवीजम् ११
सुचान्द्री प्रभा यैः पराभूतजाताः सुसौम्यैरहो तैश्च चन्द्राननो यः ।
सुचन्द्रः सदा यस्य पद्माननोऽस्ति प्रदेयात्स मेऽनन्तकल्याणवीजम् १२
स्वशक्त्या स्वबाह्वोः स्थिरीकृत्य चन्द्रौ सुचान्द्री प्रभाऽदर्श्यतश्चन्द्रबाहुः
सुधादिव्यवाण्याः सदा तृप्तभव्यः प्रदेयात्स मेऽनन्तकल्याणवीजम् १३
तपोऽरण्यदेशे तपस्योग्रशक्त्या प्रभावेणनिर्वैरिणो ये कृतास्तैः ।
भुजङ्गैः श्रितं मांति यत्पादपद्मं भुजङ्गैकमः सोऽस्तु मुक्त्यै जिनेन्द्रः १४

---

१ शुक्लध्यानवज्रास्त्रः । २ वज्रधरो नामदेवः । ३ सुसौम्यैरस्य सुचान्द्रैरित्यर्थस्वीकारेण सुचान्द्रीप्रभापराभवे विरोधोऽतः सुनिर्मलैःसुन्दरैरित्यर्थकरणे विरोधाऽभावः । ४ चान्द्रीप्रभापराभवेन हेतुना चंद्रश्रेष्ठश्चन्द्रविजेता वा । ५ पदेनानेन प्रतिवैरोध्यं सूचितं । ६ जैनमतेऽनेकचंद्रविधानात् । ७ उपलक्षणेन भुजङ्गसदृशैःक्रूर जन्तुभिः । ८ आश्चर्यीकृतं । ९ मीयते । १० भुजंगैरेकाऽद्वितीया मा शोभा यस्य सः भुजंगमाजिनेन्द्रः । ※स्थगीकृत्य-इति पाठेऽपिसाधुता ।

अमर्त्यप्रमर्त्येश्वरैर्मोक्षलक्ष्म्यै सुगीतोऽङ्गनाभिः सह स्तुत्यगीतैः ।
प्रवंद्येश्वरो यो जिनो देवदेवः प्रदेयात्स मेऽनन्तल्याणवीजम् ॥ १५ ॥
प्रधिर्धर्मचक्रस्य रत्नत्रयस्य सुनेमित्वधर्मेण संचारणे यः ।
प्रभा तस्य यत्राऽस्ति नेमिप्रभोऽर्हन् प्रदेयात्स मेऽनन्तकल्याणवीजम् ॥
महाकर्मविद्वेषिणो नाशहेतुः सुमर्ज्जीकृता येन या वीरसेना ।
तया ध्यानवीर्यान्वया वीरसेनः प्रसिद्धः स मे स्याज्जिनोऽनन्तसिद्ध्यै १७
महाभद्रशुक्लैकतानैर्गुणैर्यः प्रसिद्धो महाभद्रतीर्थंकरोऽर्हन् ।
प्रवंद्यः सदा देवधात्रीन्द्रचक्रैः प्रदेयात्स मेऽनन्तकल्याणवीजम्॥ १८ ॥
सुदेवैर्यशःश्रेष्ठकीर्तिः कृता या तयाऽराजि देवो यशोभिः प्रपूर्वः ।

---

१ देवमनुष्यैश्वरैः । २ संस्तुत्यः ईश्वरनामजिनः । ३ नेमिः । ४ नेमिप्रभस्य । ५ धर्मचक्रे, नेमौ वा । ६ देवनरेन्द्रसमूहैः ।

शुभानन्तदृष्ट्यादिभावैश्चयोऽर्हन् सदा राजितो मामपायात्स पायात् १९

विरंच्यच्युतेशैः स्ववीर्याऽजितो यः सदाऽनन्तवीर्यादिचातुष्कपिंडः।

स्वतो नामवीर्याजितात्माऽस्ति यस्य स पायादपायाज्जिनो देवदेवः २०॥

इतिस्तुत्यदेवाः सुसीमंधराद्याः महानर्घ्यमोक्षास्पदस्यैकवीजाः।

स्वनामानुसारैर्गुणैः संस्तुता ये सुगृह्णन्तु रामप्रसादस्य तेऽर्घ्यम् २१

ॐ ह्रीं विदेहस्थविद्यमानविंशतितीर्थंकरश्रीसीमंधरयुग्मंधरवाहुसुवाहुसंजातकस्वयंप्रभर्षभाननानन्तवीर्यसूरप्रभविशालकीर्तिवज्रधरचद्राननचद्रबाहुभुजंगमेश्वरनेमिप्रभवीरसेनमहाभद्रदेवयशोऽजितवीर्येभ्यो महामोक्षफलप्राप्तये जयमालिकीयमहार्घ्यं निर्वपामीति–स्वाहा ॥

---

१ ब्रह्माविष्णुमहेशैः। २ नाम्ना तथा वीर्येणाजेयात्मा, नाम्ना च वीर्यात् पूर्वोऽजित आत्मा यस्य सः अर्थात् नाम्नाऽजितवीर्यदेव इति। ३ यद्यस्य नाम तदनुसारैः।

अन्तिमपुष्पांजलिः ।

शिवसुखाय[1] जिनाः प्रविदेहगाः[2] सुखदमार्गनिरूपणतत्पराः ।
विशदबोधसुमित्राविभाविर्तैः[3] करसुमांजलिभिः[4] प्रभवन्तु मे ॥ २२ ॥

इति शिवसुखदाशीर्वादात्मिकपुष्पांञ्जलिः ।

इति पूजनकर्म ।

पूजानिर्माणस्थानम् ।

सुखानदैः[5] धन्यसुलालितैर्या[6] सुशोभते स्वर्गपुरीव तस्याः
विनिर्मिता मोहमयीनगर्याः दिगम्बरश्रीजिनचन्द्रधाम्नि ॥ १ ॥

---

१ मोक्षसुखनिमित्तम् । २ पंचविदेहविहारिणः पंचविदेहस्थाः वा जिनाः; तत्र जम्बूद्वीपीयचतुर्भेदात्मकप्रथमविदेहे आद्याश्चत्वारः धातकीयाष्टभेदात्मकद्विविदेहे चाष्ट, तथा पुष्करार्द्धेऽपि । ३ निर्मलज्ञानधारकसाधर्मिसंभावितैः (साधर्म्यनुमोदितैः), वा निर्मलज्ञानसूर्यप्रभावितैः ! ४ किरणपुष्पांजलिभिः, हस्तस्थपुष्पनिकरैर्वा । ५ सुखानां पूर्णनदैः अर्थात् सुखसमुद्रैः, चित्रेलुप्तानुस्वारतया, सुखानन्दश्रेष्ठिभिःरित्यर्थोऽपिसंगतः । ६ धन्यैः पुण्यवद्भिः सुलालितैः–प्रशंसितैः प्राप्तैरिति सुखानदपदध्वनितसुखकरपदार्थविशेषणं, अथवा–धन्नालालनामकपूज्यविद्वद्भिरित्यर्थोऽपि ।

पूजानिर्माणप्रकाशनसमयः।

शते चतुर्विंशतिके द्विपंचाशताधिके श्रीजिनवीरवर्षे।
सुमार्गशीर्षे प्रविरच्य शुक्ले चैत्रे द्वितीये च सुमुद्रितेयम् ॥ २ ॥

ग्रंथकर्तुः प्रशस्तिः।

पद्मावतीयपुरवालसुजातिजात–श्रीन्यायतीर्थचिरजीविगजाधरस्य।
रामप्रसादशुभनामधराग्रजेन[1] सीमंधरादिगुणकीर्तिकृतिः कृतेयम् ॥३॥

इतिश्रीश्रेष्ठागरामण्डलान्तर्गतजटौआग्रामनिवासिना पूज्यश्रीचुन्नीलालात्मज-रामप्रसादेन विरचिता प्रकाशिता चेयं विदेहस्थविंशतितीर्थकरपूजा ॥ शुभम् ॥

---

१ रामप्रसादनामकज्येष्ठभ्रात्रा।

प्रकाशक—**पं० रामप्रसाद लक्ष्मीचन्द्र जैन**, पद्मावतीपुरवाल—
ठि. श्रीचंद्रप्रभ दिगम्बर जैनमंदिर, भोलेश्वर, पो. नं. २ बम्बई।

मुद्रक—**दिनकर सीताराम सांखळकर**, लोकसेवक प्रेस,
खटाव मकनजीकी वाड़ी, गिरगाँव—**बम्बई**।